निज दोष दर्शन से निर्दोष जगत्

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

मनुष्य को पहाड़ के समान बड़ा अपना दोष दिखाई नहीं देता, किन्तु सरसों के बराबर छोटा दूसरों का दोष दिखाई देता है। जो व्यक्ति छिद्रान्वेषी होता है वह सर्वत्र दोष ही देखता है। सकारात्मक सोच का व्यक्ति सर्वत्र गुणों को ही देखता है। जिसकी दृष्टि जैसी होती है संसार उसे वैसा ही दिखाई देता है। अच्छे व्यक्ति को सब अच्छे ही दिखाई देते हैं किन्तु बुरे व्यक्ति को सब बुरे दिखाई देते हैं। यह दृष्टि और नजरिये का भेद है। कबीरदासजी ने कहा है–

बुरा जो देखन मैं चला, बुरा न मिलिया कोय।

जो दिल खोजा आपना मुझसे बुरा न कोय।

अर्थात् बुराई बाहर नहीं बुराई अपने अन्दर है। इसलिए दूसरों में बुराई नजर आती है। अपनी बुराई का ज्ञान होना सबसे बड़ा ज्ञान है। बुराई को दूर करने का प्रयास करना चाहिए। कषाय अर्थात् क्रोध, मान, माया, लोभ दुख देने वाले हैं। मनसा वाचा और कर्मणा यदि किसी के प्रति बुरे भाव हैं तो पाप का बंधन होता है। राग–द्वेष भीतर इकट्ठे होते रहते हैं। जन्म–जन्मान्तर से इनकी जड़ें अन्तःकरण में जमी हुई हैं।

किसी को दुख देने से दुख प्राप्त होता है और किसी की भलाई करने से भलाई मिलती है। जो जैसा करता है वह वैसा भोगता है। यह जगत निर्दोष है। दोष हमारे अन्दर है। जब हम किसी की तरफ एक अंगुली दिखाते हैं तो चार अंगुलियां अपनी ओर संकेत करती है। इसका अर्थ यह है कि यदि हम किसी में एक गलती देखते हैं तो अपने अन्दर चार गलती रहती है। अपने को सुधारने से संसार सुधर जायेगा। भाव सुधारिये भव सुधर जायेगा। जगत् निर्दोष सब मेरा दोष है। अपने दोष को देखकर उसे दूर करने का प्रयास करना चाहिए।

जगत् का अर्थ है– संसार। इसे अनेक नामों से जाना जाता है। सृष्टि या दुनिया यह प्रकृति चौरासी लाख जीव योनियों का उत्पत्ति स्थान जगत् है। इसमें प्राणी अपने कर्मों के अनुसार उत्पन्न होता रहता है और मरता रहता है। यह जगत् निर्दोष है। अर्थात् इसमें दोष नहीं है।

यह गंगा की तरह पवित्र है। सम्पूर्ण सृष्टि निर्दोष है। सभी पाप मानव के अन्दर ही प्रतिष्ठित है। सृष्टि के अन्दर किसी भी प्राणी में दोष नहीं देखना चाहिए। भुगतान संतुलन की तरह जीवन को देखना चाहिए। कार्मण शरीर संबंधों का पुतला है। आत्मा के साथ यह जुड़ा हुआ है। दोष मेरे भीतर जो अशुद्धियां है वह है। इस दोष के कारण यह शरीर प्राप्त हुआ है। क्रोध, मान, माया, लोभ कषाय हैं। इसलिए इन्हें हटाकर आगे बढ़ना चाहिए। कषाय को दूर करने के लिए संवर और निर्जरा का अभ्यास करना चाहिए।

यह सृष्टि नौ तत्वों का परिणाम है। जीव, अजीव, पुण्य, पाप, आस्रव, संवर, निर्जरा, बंध और मोक्ष इन नौ तत्वों से सृष्टि बनी हुई है। सम्पूर्ण सृष्टि को देखकर प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि इसका स्वरूप क्या है? इसका संचालन कौन करता है? मैं कौन हूं? कहां से आया हूं? इत्यादि अस्तित्व संबंधित प्रश्न स्वयं ही मन में उत्पन्न हो जाते हैं। जहां तक जगत का प्रश्न है जैन दर्शन के अनुसार जगत शाश्वत है। जगत का नियंता कोई ईश्वर नहीं बल्कि छः द्रव्यों के आधार पर यह जगत् स्वयं संचालित होता है। द्रव्य के मुख्यतः दो भेद है–जीव द्रव्य और अजीव द्रव्य। जीव या आत्मा जैन दर्शन में एक स्वतंत्र द्रव्य है। इसका लक्षण है–चेतना। चेतना को जीव का असाधारण धर्म बतलाया गया है–चेतना लक्षणो जीवः। जहां चेतना है वहां जीव हैं।

अजीव द्रव्य वे द्रव्य हैं जिसमें चेतना नहीं होती। अजीव द्रव्य के पांच भेद है– पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल। यह विश्व छह द्रव्यों की रचना है। इसमें दो प्रकार के जीव है– 1. मुक्त जीव 2. संसारी जीव। मुक्त जीव को परमात्मा, ईश्वर, सर्व शक्तिमान ,सिद्ध, शुद्ध जीव, आदि नाम से जाना जाता है। इन मुक्त जीवों के अतिरिक्त सभी जीव संसारी जीव हैं। जीव का उपयोग लक्षण चेतना है। विश्व में कोई भी ऐसा जीव या प्राणी नहीं है जिसमें चेतना विद्यमान न हो अर्थात अस्तित्व के रूप में प्रत्येक जीव चेतनयुक्त है। संसार में जन्म लेने वाला जीव अज्ञान के कारण ऐसे कर्मों का अर्जन करता है जिसके कारण उसे बंधन ग्रस्तता प्राप्त होती है इसलिए जैन दर्शन में प्रत्येक जीव अपने कर्मो का स्वयं जिम्मेदार है और कर्म के परिणामों की भी जिम्मेदारी स्वयं उसकी है। यह जीव का कर्त्ता–भोक्तापन की विशेषता है।

कर्त्तृत्व व भोक्तृत्व संसारी जीव में ही पाया जाता है। इसलिए दोष जीवों में ही पाया जाता है।

अजीव द्रव्यों में पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल द्रव्य आते हैं। सृष्टि की रचना इन्हीं द्रव्यों के सहयोग से हुई है। जैन दर्शन में संसार को अनादि और अनन्त मानते हुए जगत को यथार्थ सत्ता के रूप में परिभाषित किया गया है। जगत स्वयं में स्वतंत्र अस्तित्ववान है। यह अपनी सत्ता के लिए किसी चेतन या ईश्वर तत्व पर आधारित नहीं है। जैन दर्शन में भौतिक वस्तुओं की सत्ता को स्वीकार करते हुए उसका नामकरण पुद्गल के रूप में किया है। पुद्गल का सामान्य अर्थ है भौतिक वस्तु। पुद्गल रस, गंध और स्पर्शवान कहा गया है।इसलिए पुद्गल रूपी पदार्थ है। पुद्गल एक भौतिक तत्व है।